घमंडी कौआ

पौराणिक प्रसंग (कर्ण पर्व)

॥ विश्वजीत 'सपन' ॥

महाभारत की लोक कथा - भाग 8

बहुत समय पहले की बात है। समुद्र के तट पर एक बहुत ही धर्मप्रधान राजा के राज्य में धनधान्य से संपन्न एक वैश्य रहता था। वह बहुत बड़ा दानी था। उसे पशु-पक्षियों से विशेष अनुराग था। अपने खाने के पश्चात् जूठन पशु-पक्षियों के लिए छोड़ दिया करता था।

उस वैश्य के घर के पास में ही एक बड़ा पेड़ था। उस पर एक कौआ रहता था। वैश्य उस कौए को अपने भोजन से जूठन दिया करता था। कौए को मुफ्त में ही भोजन मिल जाया करता था। इसलिये अब वह कुछ नहीं करता था। बैठा-बैठा जूठन खाता और मजे से पेड़ पर सोता रहता था। इस प्रकार जूठन खा-खाकर बहुत ही हृष्ट-पुष्ट हो गया। धीरे-धीरे उसे अपनी ताकत और बुद्धिमानी पर घमंड होने लगा। वह इतना घमंडी हो गया कि अन्य पशु-पक्षियों का अपमान भी करने लगा। एक दिन उस समुद्र तट पर मानसरोवर झील में रहने वाले कुछ हंस आये। हंस की सुन्दरता देखकर कौआ जल-भुन गया। वह स्वयं को किसी से कम नहीं मानना चाहता था। उसने सोचा कि यदि मैं इन्हें किसी प्रकार हरा दूँ, तो सभी इनकी सुन्दरता के बाद भी मुझे ही मान-सम्मान देंगे। इस तरह विचार कर उसने हंस से कहा कि मैंने सुना है कि तुम बहुत अच्छी उड़ान भरते हो, लेकिन मुझे नहीं लगता कि यह सच है। क्यों न हमारे और तुम्हारे बीच में उड़ान की एक प्रतियोगिता हो जाये। यह सुनकर वहाँ आये सभी हंस हँस पड़े। कौए को उनका हँसना तनिक भी न भाया। उसने कहा कि क्यों डरते हो? हमसे मुकाबला करना नहीं चाहते? हंस ने कहा कि ऐसी बात नहीं है। हमें तो तुम्हारी धृष्टता पर हँसी आ रही है। हम मानसरोवर के हंस हैं। हम इस पृथ्वी पर लंबी उड़ानें भरते रहते हैं। अतः सभी पक्षी हमारी इन लंबी उड़ानों के कारण हमारा सम्मान करते हैं। तुम किस प्रकार हमारा मुकाबला कर पाओगे?

कौआ अपनी चाल की विफलता देखकर सोचने लगा कि यदि बातों से ही ये हंस जीत गये तो उसके मान को और ठेस लगेगी और सभी पक्षी ये मान लेंगे कि हंस उससे श्रेष्ठ हैं। इसलिये उसने अपनी बड़ाई करते हुए कहा कि बातें तो सभी बना सकते हैं, किन्तु क्या तुम एक सौ एक प्रकार की उड़ानें भर सकते हो? मैं इन सभी प्रकार की उड़ाने भर सकता हूँ। ये सभी उड़ानें सौ-सौ योजन की होती हैं।

अब हंस सोच में पड़ गये। उन्हें तो केवल एक प्रकार की उड़ान ही आती थी। कौए ने उन्हें सोचता देखकर फिर कहा कि मैं तो तुम्हें उनके नाम भी गिना सकता हूँ। डीन (साधारण उड़ना), उड्डीन (ऊँचा उड़ना), अवडीन (नीचा उड़ना), प्रडीन (चारों ओर उड़ना), निडीन (धीरे-धीरे उड़ना), संडीन (ललित गति से उड़ना), विडीन (दूसरों की चाल की नकल करते हुए उड़ना), परिडीन (सब ओर उड़ना), महाडीन (अति वेग से उड़ना), अभिडीन (सामने की ओर उड़ना), गतागत (किसी लक्ष्य तक उड़कर लौट आना), प्रतिगत (पलटा खाना) इत्यादि। मैं यह सब गतियाँ तुम्हारे सामने करूँगा। बताओ मैं किस गति से उड़ूँ?

हंस बोला कि काक, तुम अवश्य सौ प्रकार की उड़ानें भर सकते हो। मैं केवल एक प्रकार से ही उड़ूँगा। मुझे किसी और प्रकार का ज्ञान नहीं है।

यह सुनकर सभी कौए हँसने लगे और कहने लगे कि यह हंस कैसे एक प्रकार की उड़ान से सौ प्रकार की उड़ान का मुकाबला कर पायेगा। अवश्य उसकी हार निश्चित है।

इस प्रकार हंस और बातूनी कौआ आकाश में उड़ चले। कौआ अपनी चाल पर खुश था। वह अनेक प्रकार की उड़ानें भरकर दर्शकों को चकित करता हुआ उड़ने लगा। सभी उसकी इन कलाओं को देखकर आश्चर्यचकित थे। उधर हंस अपनी एक चाल से उड़ा चला जा रहा था। उसका वेग कौए से बहुत कम था। यह देखकर अन्य कौए कहने लगे कि यह हंस उड़ा तो अवश्य, लेकिन वह इतना धीरे चल रहा है कि कभी भी जीत नहीं सकता। हंस धीरे-धीरे अपना वेग बढ़ाते हुए समुद्र की तरफ चला गया। उधर वह घमंडी कौआ अनेक प्रकार की कलाबाजियाँ दिखाने में अपनी ऊर्जा नष्ट करता जा रहा था। कुछ समय बाद उसे थकान होने लगी। समुद्र बहुत विशाल था। चारों तरफ पानी ही पानी था। कौए ने इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई, किन्तु उसे कहीं भी टापू या वृक्ष दिखाई नहीं दिया। वह भयभीत हो गया कि अगर उसे धरती शीघ्र नहीं मिली तो क्या होगा? बस, ऐसा सोचते ही थकान से उसके पंख चलने बंद हो गये। वह पानी में गिरने लगा और हंस से बोला कि भाई हंस, मुझे बचा लो। मुझे लगता है कि मैं पानी में गिर पड़ूँगा। हंस बोला कि तुम तो बड़ी शेखी बघार रहे थे कि सौ प्रकार की उड़ानें भर सकता हूँ। अब कोई ऐसी उड़ान भरो कि बच जाओ।

कौआ शर्मिंदा होकर बोला कि मुझे क्षमा करो, हम कौए हैं और हमें काँव-काँव करने की आदत है। अब मेरे प्राण तुम्हारे हाथ में हैं। मुझे बचा लो।

हंस बोला कि तुमने न केवल हमारा अपमान किया बल्कि कई अन्य दूसरे पक्षियों का भी निरादर किया है। पहले यह बताओ कि तुमने ऐसा क्यों किया, तभी तुम्हारे प्राण बच सकते हैं।

कौआ अपनी करनी पर बहुत शर्मिंदा था। उसने सब कुछ सच-सच बता दिया और कहा कि भाई हंस, मैं मुफ्त का जूठन खा-खाकर घमंडी हो गया था। मैं अपने आपको गरुड़ के समान समझने लगा था। मुझे क्षमा करो और किसी टापू पर पहुँचा दो। अब मैं कभी किसी का निरादर नहीं करूँगा।

इतना कहकर वह कौआ अचेत होकर पानी में गिर पड़ा। तब हंस को उसकी दशा पर दया आ गई और उसने कौए को अपने पंजों से पकड़कर धीरे से अपनी पीठ पर चढ़ा लिया। फिर वह उसी स्थान पर आ गया, जहाँ से वे दोनों शर्त लगाकर उड़े थे। सबने हंस के धैर्य एवं वीरता की प्रशंसा की।

कौए ने अपनी जान बचाने के लिये हंस से आभार प्रकट किया। उसने प्रतिज्ञा की कि वह कभी किसी से झूठी शर्त न लगायेगा। उस दिन के बाद से वह कौआ किसी का निरादर नहीं करता था। उसने वैश्य का दिया जूठन भी खाना छोड़ दिया। अब वह दिनभर उड़कर अपना दाना इकट्ठा करता अपना जीवन-यापन करने लगा।

इसीलिये कहा गया है कि दूसरे के सहारे पलने वाले को अपने बल एवं वीर्य पर घमण्ड हो ही जाता है। जब तक आत्मविश्वास है, तब तक तो ठीक है, अन्यथा घमण्ड टूट ही जाता है।

अपना चित्र सबको अच्छा लगता है

॥ हृदयनारायण दीक्षित ॥

अपना चित्र सबको अच्छा लगता है। पशु पक्षी भी पानी में अपने रूप को ध्यान से देखते हैं। पालतू पक्षी या कुत्ते भी दर्पण में अपना रूप निहारते हैं। हमारा रूप हमारे अन्तस् का ही विस्तार है। अन्तस् अति सूक्ष्म है और रूप स्थूल। रूप देखा जा सकता है, लेकिन चित्त दिखाई नहीं पड़ता। यह अनुभूति का भाग है। किसी रूप, वस्तु, प्राणी या कथन का 'अच्छा लगना' आनंदवर्द्धन होता है। वैदिक साहित्य में इसके लिए बहुधा 'रम' क्रिया का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद (दूसरे मण्डल) में वायु को बहते हुए आनंदित-रमते कहा गया है। परस्पर बातचीत, सृजन, कला, संगीत और प्रश्नों में आनंद मिलता है। तत्वज्ञान और सृष्टि रहस्यों पर होने वाली गपबाजी भी तरोताजा करती है। वे घर, गाड़ी, धन, पद आदि साधारण लब्धियों के अलावा और किसी बात में मधुरस नहीं पाते। ऋग्वेद में वरूण से प्रार्थना है जो प्रश्नों, जिज्ञासा व संवाद में रस नहीं लेते-न संवादाय रमते, उनसे हमारी रक्षा करो। सारी कलाएं आनंद देती हैं। संगीत कला आदि से अलग रहने वाले मित्र प्रायः आनंदरिक्त होते हैं। उनकी संगति में जीवनवीणा के संगीत नहीं उगते। चित्रकला प्राकृतिक सौन्दर्य का पुनर्सृजन होती है। बहुत सारे मित्र चित्रकला में रस नहीं लेते, लेकिन अपने चित्र को बार-बार देखते हैं।

मैं सामाजिक राजनैतिक कार्यकर्ता हूं। विभिन्न अवसरों पर हमारे हजारों चित्र लिये गए हैं। मुझे बचपन का पहला चित्र याद है। पड़ोस के मेले में फोटोग्राफर की दुकान थी। हम अपनी मां के साथ पैदल पांच कि.मी. दूर मेले में थे। फोटोग्राफर ने दफ्ती की मोटर साइकिल बना रखी थी। हम उसी पर बैठे। फोटो बना। फोटे में मैं मोटर साइकिल चला रहा था। पहले सप्ताह मैंने इस चित्र को बार-बार देखा। फिर चित्र बनते रहे। पद प्रतिष्ठा की बढ़त के साथ अखबारों में भी छपने लगे। अब तक लाखों चित्र छप गये या टीवी पर चल गये। इधर विभानसभा अध्यक्ष के रूप में चित्रों की बहार आ गई। अध्यक्ष होने के पहले सभी प्रतिष्ठित पत्रों व टीवी चैनलों ने मेरे चित्र दिये। कुछेक चैनलों ने कहा कि उनका अनुमान सच निकला। मुख्यमंत्री, नेता प्रतिपक्ष व संसदीय कार्यमंत्री आदि महानुभावों के साथ अध्यक्षी के आसन तक जाने वाला मेरा चित्र सामने है। फिर चित्र ही चित्र। मैं गहन प्रश्नाकुल हूं कि लाखों चित्रों के बावजूद मेरा चित्त अभी भी क्यों नहीं अघाया। आखिरकार ऐसी अभिलाषा का कोई तो अंतिम छोर होगा। अथ और इति परस्पर मित्र हैं। वे प्रत्यक्ष में दो हैं लेकिन अन्ततः एक। ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में जिज्ञासाएं हैं। ऋषि कवि निर्दोष ईमानदार हैं। कहते हैं कि मैं ब्रह्माण्ड का केन्द्र जानना चाहता हूं-**पृच्छामि त्वां भुवनस्य नाभिः।** एक प्रश्न है कि सूर्य निराधार कैसे लटके हैं? विश्वकर्मा ने जगत् बनाया तो कहां बैठे? क्योंकि तब जगत नहीं था। मेरे अपने चित्त में भी प्रश्न ही प्रश्न हैं। ताजा प्रश्न मजेदार है कि मैं अपना चित्र देखकर प्रसन्न क्यों होता हूं। मेंने अनेक राजनेताओं को वरिष्ठों के साथ चित्र में जगह पाने के लिए धक्का खाते देखा है। मेरा मन भी ऐसा ही रहा है। मैं संसार का ही हिस्सा हूं। मैं, मेरा ही संसार है। मेरा चित्र मेरी ही अनुकृति है। सो अपना चित्र सबको अच्छा लगता है यह मनोवैज्ञानिक निष्कर्ष है। सिगमण्ड फ्रायड के महाग्रंथ साइकोएनालिसिस में इस प्रश्न का सटीक उत्तर नहीं है तो भी इसे फ्रायड के लिविडो सिद्धांत से जोड़ सकते हैं। भारतीय दर्शन में परिपूर्ण मार्गदर्शन है। हम स्वयं को अभिव्यक्त करने का गुण लेकर जन्मे हैं। रूप-शरीर हमारे चेतन की ही अभिव्यक्ति है। सो शरीर ही हमारा सर्वाधिक प्रिय रूप है। चित्र इसी रूप का पुनर्सृजन है सो प्रिय लगता है। लेकिन यह बात पूरी संतुष्टि नहीं देती।

> प्रकृति में रूप ही रूप हैं। चार्ल्स डारविन ने अपने अध्ययन के लिए दुनिया के तमाम क्षेत्रों की यात्राएं कीं। डारविन का कहना है कि प्रकृति के रूप हम सबके भीतर संवेदन जगाते हैं। निष्कर्ष सही जान पड़ता है। रूप ही नहीं जीव जन्तुओं की ध्वनियां भी संवेदन जगाती हैं। संभव है कि वे प्रकृति के रूप देखकर जन्मे संवेदनों को प्रकट करने के लिए बोलते हों। ऐसे ही बोली सुनकर भी रूप देखने की इच्छा का जागना संभव है। रूप का सम्बंध आंख से है और ध्वनि का कान से, लेकिन दोनो से प्राप्त संवेदन चित्त में जाते हैं। ऐसे में चित्त ही मुख्य प्रभाव क्षेत्र होता है। दोनो दशाओं में चित्त में चित्र बनते हैं। कालिदास प्रकृति चित्रण के विश्व प्रतिष्ठ कवि है।

प्रकृति में रूप ही रूप हैं। चार्ल्स डारविन ने अपने अध्ययन के लिए दुनिया के तमाम क्षेत्रों की यात्राएं कीं। डारविन का कहना है कि प्रकृति के रूप हम सबके भीतर संवेदन जगाते हैं। निष्कर्ष सही जान पड़ता है। रूप ही नहीं जीव जन्तुओं की ध्वनियां भी संवेदन जगाती हैं। संभव है कि वे प्रकृति के रूप देखकर जन्मे संवेदनों को प्रकट करने के लिए बोलते हों। ऐसे ही बोली सुनकर भी रूप देखने की इच्छा का जागना संभव है। रूप का सम्बंध आंख से है और ध्वनि का कान से, लेकिन दोनों से प्राप्त संवेदन चित्त में जाते हैं। ऐसे में चित्त ही मुख्य प्रभाव क्षेत्र होता है। दोनों दशाओं में चित्त में चित्र बनते हैं। कालिदास प्रकृति चित्रण के विश्व प्रतिष्ठ कवि है। उनके रचे 'मेघदूत' का विरही नायक यक्ष पहाड़ों पर अपनी प्रेमिका पत्नी का चित्र बनाता हैं आंसू झरते रहते हैं। आंसू की धार में चित्र घुलता जाता है। चित्र पहले बनता है चित्त में। फिर प्रकट होता है कला कर्म में। चित्रकला वस्तुतः हमारे चित्त में उगे रूप आकार का ही रूपायन है। अरस्तू ने ठीक कहा था कि कला प्रकृति की अनुकृति है लेकिन शतपथ ब्राह्मण के ऋषि ने ज्यादा ठीक कहा था **यो वे रूपम्, तत् शिल्पम्**- जो उसका रूप है वही कला है। यहां 'उसका' अर्थ परमचेतना है।

चित्र में चित्त की भूमिका है, लेकिन चित्र की सीमा है। चित्त गतिशील है और चित्र स्थितिज। समय को गतिशील कहा गया है। चित्र समय विशेष का ही रूपायन होते हैं। बेशक सिनेमा को चलचित्र कहा जाता है। सिनेमा में गतिशील चरित्रों घटनाओं को गतिशील रूप में प्रस्तुत किया जाता है लेकिन समय का बंधन उन पर भी होता है। हम भले ही ईसा की पांचवी छठी के कथानक पर 'उत्सव' जैसी फिल्म बनाए या 1980-90 के दशक में 'एक लवस्टोरी 1947', लेकिन कोई भी चित्र या चलचित्र चित्त के समान गतिशील नहीं होते। सारे चित्र अपने जन्म के साथ ही स्मृति का भाग बन जाते हैं। मैं स्वभाव से व्यवस्थित नहीं हूं इसलिए मेरे पास अपने चित्रों के संकलन नहीं। तो भी तरूणाई वाले कुछेक चित्र मैं ध्यान से देखता हूं। अपने चित्र के अलावा भी तमाम चित्र अच्छे लगते हैं। सबकी अपनी अपनी रूचि। कुछ लोग फिल्म अभिनेत्री कैटरीना या करीना के चित्र पसंद करते हैं। गांधी, अम्बेडकर, लोहिया, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी, पं. दीनदयाल उपाध्याय, अटल जी आदि के चित्र भारी पसंद पाते हैं। नरेन्द्र मोदी के चित्र सर्वाधिक लोकप्रिय महानायक के रूप में वरीयता पाते ही हैं। समाजसेवा या सिनेमा के अलावा और भी अनेक क्षेत्रों के चित्र चर्चा में रहते हैं। सबकी पसंदीदा सूची भिन्न होना स्वाभाविक है। मैं शत प्रतिशत विकलांग स्टीफेन हाकिंग के चित्र को सैंकड़ो बार ध्यान से देख चुका हूं। हाकिंग का चित्र निराशा दूर करता है। सितार सम्राट रविशंकर के बुढ़ापे वाले चित्रों में बच्चों जैसा रूप झलकता है। संविधान सभा की बैठक में बोलते सरदार पटेल का दुर्लभ चित्र कई दफा देख चुका हूं। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के साथ ए.जी. खेर का एक चित्र संविधान सभा का ही है। डॉ. अम्बेडकर व पं. नेहरू के चित्र दर्शनीय हैं। वे सब हमारे पूर्वज हैं। यो सभी कला चित्र चित्त की निर्मित हैं लेकिन पूर्वजों के चित्र चित्त की भूमिका बदलते हैं। संभवतः इसीलिए हमारे कलाकारों ने देवों के भी कल्पित चित्र बनाए हैं। चित्रों की अपनी भूमिका है। वे भावोत्तेजन करते हैं, प्रेरित भी करते हैं। इतनी दूर तक सोचने विचारने के बावजूद मूल प्रश्न जस का तस है कि आखिरकार हम सबको अपना चित्र ही बार-बार देखने में मजा क्यों आता है? याज्ञवल्क्य ने पत्नी मैत्रेयी से कहा था सब स्वयं को ही प्यार करते हैं। पिता पुत्र को या पुत्र भी पिता को नहीं। राजा प्रजा को या प्रजा भी राजा को नहीं। स्वयं की प्रीति के क्षेत्र में जो समा जाता है, वह स्वयं का भाग बन जाता है। फिर अपना चित्र तो स्वयं का ही चित्र है। संभवतः वह अपना है इसीलिए या कोई और बात भी हो सकती है?

लेखक उत्तर प्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष हैं।